BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 3, Issue 2, April-June, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

# पर्यावरण संरक्षण और गांधी विचार

**नवीन कुमार (शोध छात्र)**

**गांधी एवं शांति अध्ययन-विभाग**

**महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, बिहार**

## शोध-सार

महात्मा गांधी का पर्यावरण से गहरा संबंध था। उन्होंने अपने जीवन में सादा जीवन और उच्च विचारों की आदतों को अपनाया, जिससे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण होता था। गांधी जी का मानना था कि प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन मानवता के लिए हानिकारक है, और हमें प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने की आवश्यकता है। उनकी "सादा जीवन, उच्च विचार" की अवधारणा ने यह संदेश दिया कि हम अपने जीवन में ऐश्वर्य और भोग विलास से दूर रहकर प्रकृति के साथ संतुलित तरीके से जी सकते हैं। गांधी जी ने "अहिंसा" की नीति को केवल मानवता तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्होंने यह भी माना कि सभी जीवों, पेड़-पौधों और पर्यावरण का सम्मान करना चाहिए।

**मुख्य शब्द**- प्राकृतिक संसाधन, प्रकृति, पर्यावरण, अहिंसा, सादा जीवन, उच्च विचार

## स्वदेशी चिन्तन में पर्यावरण चेतना

स्वदेशी की संकल्पना विकेंद्रीकरण की अनिवार्य नियम है। स्थानीय उत्पादन और स्थानीय उपभोग पर स्थापित विकेंद्रीकृत व्यवस्था, स्वदेशी के प्रति प्रेम की नैतिक आधारशिला पर ही खड़ा हो सकता है। स्वदेशी के चिंतन के नैतिक पक्ष को स्पष्ट करते हुए गांधी ने कहा कि स्वदेशी अर्थ के विषय में धर्म का प्रतिनिधित्व करता है। गांधी ने चरखा और खादी को स्वदेशी पर आधारित अर्थशास्त्र के दो गतिशील प्रतीक बताया और कहा कि दोनों भारत के हजारों गांवों में फैली हुई विभिन्न सामाजिक समस्याओं जैसे गरीबी और बेरोजगारी की समस्या का समाधान कर सकता है। गरीबी व बेरोजगारी की समस्या के लिए आज चरखा को उपाय के रूप में भी देखा जा सकता है। इससे जन-जन में स्वदेशी का प्रचार प्रसार होगा। इससे अलावा औद्योगीकरण कम होगा और अपने आप ही पर्यावरण असंतुलन कम होता जाएगा।[1] गांधी के इस स्वदेशी के विचार को स्वधर्म तथा बाईबिल के 'पड़ोसी भाव' के हम करीब पाते है। इसका अर्थ है व्यक्ति के सबसे नजदीकी वातावरण के प्रति स्वधर्म। स्वदेशी एक व्यापक संकल्पना है जिसमें नैतिक, सामाजिक, अर्थशास्त्रीय, पर्यावरणीय, राजनीतिक, आध्यात्मिक आदि अर्थ समाहित है। गांधी टॉलस्टाय के इस विचार से बेहद प्रभावित थे। गांधी अपने स्वदेशी विचार में स्थानीय उत्पादों को महत्व देते है। वे धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्र में स्वदेशी वस्तुओं, विचारों, मान्यताओं को अपनाने में बहुत अधिक जोर देते थे। गांधी का यह चिन्तन पूरे दुनिया के लिए अति आवश्यक है क्योंकि ऐसा करने से केन्द्रीकरण, भूमंडलीकरण, व्यवसायीकरण एवं औद्योगिकीकरण को बढ़ावा नहीं मिलेगा। जिससे समाज और पर्यावरण में विषमता तथा असंतुलन उत्पन्न नहीं होगा।[2] गांधी गांव पे आधारित अर्थव्यवस्था चाहते थे, जो लघु एवं छोटे-छोटे उद्योगों पर आधारित हो। गांधी व्यक्ति को स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर बनाने के लिए स्थानीय वस्तुएं जैसे चरखा, खादी के उपयोग को महत्व देते है। वे विकेंद्रीकरण एवं स्थानीयकरण चाहते थे। जिससे आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न न हो। गांधी के सम्पूर्ण स्वदेशी चिंतन में पर्यावरण चेतना के बीज बिखरे पड़े है। जिन्हें हमें ढूंढने और संभालने की आवश्यकता है। स्वदेशी का चिंतन अपने आप में एक वृहद संकल्पना है, जिसमें जीवन के हरेक आयाम समाए हुए हैं। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से अगर देखा जाए तो निश्चित रूप से स्वदेशी की चिन्तन काफी लाभदायक और समस्त प्राणी जगत के लिए कल्याणकारी साबित हो सकता है।

## अपरिग्रह चिन्तन में पर्यावरण चेतना



@2025 Bihar Shodh Samaagam

गांधी के अनुसार प्रकृति संसार की हर मानव की जरूरतों को पूरा कर सकती है लेकिन किसी एक मानव की भी लालच को पूरा नहीं कर सकती। अपरिग्रह का अर्थ है आवश्यकताओं से अधिक संचय न करना। जब भी मनुष्य जरूरी के आवश्यकता से अधिक संसाधनों का संचय करता है तो निश्चित रूप से समाज में असमानता तथा पर्यावरण में असंतुलन पैदा होता है। अपरिग्रह की भावना ही प्राकृतिक जीवनशैली का नियम है। गांधी का यह अपरिग्रह का चिन्तन सामाजिक एवं पर्यावरण सन्तुलन को स्थापित करने का एक बेहतरीन विकल्प है।[3] गीता से गांधी ने अपरिग्रह को भी अपनाया। गीता के गहन अध्ययन के बाद गांधी ने अपरिग्रह के धारणा को त्यागा। परग्रही की भावना ने मानव को आज इतना स्वार्थी और लालची बना दिया कि उसे खुद से कभी संतुष्टि मिल ही नही सकती। इसीलिए गांधी हृदय परिवर्तन की बात करते हैं। गांधी को ट्रस्टी शब्द का अर्थ गीता के माध्यम से ही समझ में आया। वास्तव में जो न्यासी होते हैं, वे करोड़ों की संपत्ति रखने के बावजूद एक भी रुपया पर उनका अधिकार नहीं होता है। एक अपरिग्रही के लिए समभाव का चिन्तन एवं हृदय परिवर्तन का होना आवश्यक है। गीता के अध्ययन के उपरांत गांधी ने शरीर को भी अपने आप में परिग्रह माना और इसीलिए अल्पाहार को अपनाया। इसका उद्देश्य शरीर की जरूरतों के साथ समझौता करना नहीं, बल्कि इंद्रियों पर नियंत्रण करना है। मानव के शरीर और वातावरण के बेहतरी के लिए उन्होंने अल्पाहार और शाकाहार को प्राथमिकता दी। गीता आधारित गांधी के चिन्तन में भौतिकता के स्थान पर अध्यात्म को अधिक बल दिया गया। अपरिग्रह एवं ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को यदि ईमानदारी से लागू किया जाये तो वर्तमान में हमारे सामने मौजूद पर्यावरण असंतुलन सम्बन्धी समस्याओं को काफी हद तक प्रबंधन किया जा सकता है।[4] अपरिग्रह का अर्थ है असंग्रह यानी सभी भौतिक संसाधनों के प्रति त्याग की भावना। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति अपनी जरूरी की आवश्यकता से अधिक किसी भी वस्तुओं या संसाधनों पर अपना अधिकार स्थापित नहीं करेगा। व्यक्ति अपनी जरूरतों को इस हद तक सीमें में मित कर ले कि वह केवल उन वस्तुओं और साजो-समान को आवश्यक माने जो उसके दैनिक जीवन को चलाने के लिए जरूरी हो। अपरिग्रह का चिन्तन पर्यावरण विकल्प के लिए काफी उपयुक्त है। हम सभी को जितना कम-से-कम हो सके संपत्ति व आवश्यक चीज़ें ही रखनी चाहिए और बाकी को समाज की भलाई के लिए स्वेच्छा से दान कर देनी चाहिए। इससे न केवल समाज का ही भला होगा, बल्कि प्रकृति का भी दोहन बचेगा जो आज के सन्दर्भ में पर्यावरण असंतुलन का मुख्य वजह है। जैसे कि कहा गया है कि पूरी धरा गोपाल की अर्थात ईश्वर की है। जितने भी तरह के दान हम सुनते है- जैसे भूदान, संपत्ति दान, जीवन दान, रक्तदान, नेत्रदान आदि ये सभी अपरिग्रह के सिद्धांत से ही प्रभावित है। सन्त एवं दार्शनिक ही नहीं बल्कि वर्तमानकालीन सामाजिक वैज्ञानिकों ने भी इसे सिद्ध कर दिया है। अब विद्वानों द्वारा यह माने जाने लगा है कि मानव की भोगवादी जीवनशैली कई सामाजिक समस्याओं के उत्पन्न होने की मुख्य वजह है। गांधी के अनुसार आवश्यकता से अधिक की संसाधनों का परित्याग करने में ही मानव का कल्याण संभव है। आज परिग्रह की भावना ने मनुष्य को इतना संकुचित बना दिया है कि वह अपने लिए ही नहीं बल्कि भविष्य की आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों एवं वस्तुओं का संचय करता है। इस तरह जाने- अनजाने में वह केवल अपना ही नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी विनाश का रास्ता तैयार कर रहा है। अतः आज के सन्दर्भ में गांधी का यह चिन्तन प्रासंगिक ही नहीं अतिआवश्यक, उपयोगी व व्यावहारिक भी है जो पर्यावरण के समस्याओं के समाधान का उपाय प्रस्तुत करता है।[5]

## सर्वोदय चिन्तन में पर्यावरण चेतना

सम्पूर्ण विकास की अवधारणा को सर्वोदय कहते है। पर्यावरण दर्शन की बुनियाद गांधी जी के सर्वोदयी समाज के रूप में देखा जा सकता है, क्योंकि गाँधी का सर्वोदयी समाज ही संपोषणीय समाज है। गाँधी के सर्वोदय चिंतन में संतुलित एवं व्यवस्थित विकास की चिंता है। भारतीय परंपरा में तो सारी सृष्टि ईश्वर की ही मानी जाती है। गाँधी के समग्र विकास के सिद्धांत के केंद्र में यही भारतीय परम्परा की झलक देखने को मिलती है। गांधी ने सर्वोदय सिद्धान्त में रस्किन की पुस्तक 'अन्टू दिस लास्ट' के उस सूत्र को महत्व दी है, जिसमें कहा गया है कि व्यक्ति का शुभ समष्टि के शुभ में निहित है। इसका तात्पर्य है समाज के भले में ही व्यक्ति का भला समाया हुआ है। सर्वोदय के साधन सत्य, अहिंसा अपरिग्रह, शारीरिकश्रम, अस्तेय, समभाव आदि है। गाँधी इस दृष्टिकोण के अंतर्गत मशीनीकरण, औद्योगिकीकरण, केन्द्रीकरण एवं पाश्चात्य विकास नीतियों का विरोध करते है। उनके अनुसार पाश्चात्य विकास मॉडल सामाजिक एवं पर्यावरण समस्याओं को

उत्पन्न करता है। गाँधी विकास का जो मॉडल सर्वोदय के रूप में सुझाते है, उसमें स्वार्थ, हिंसा, परावलम्बन एवं अभाव का कोई स्थान नहीं है। अतः स्पष्ट हो जाता है कि गाँधी मानव के साथ-साथ समय सृष्टि की चिन्ता करते है।[6]

सत्य और अहिंसा की व्याख्या करने के बाद गांधीवादी दर्शन के अंतर्गत सर्वोदय और अपरिग्रह जैसे सिद्धांत का उल्लेख करेंगे। ताकि हम गांधीवादी दर्शन की पर्यावरणीय संरक्षण के सन्दर्भ में प्रासंगिकता की विस्तृत व्याख्या कर सकें। सर्वोदय का सिद्धांत अहिंसा के सिद्धांत पर आधारित है जिसमें सभी लोगों के कल्याण की बात कही गई है। यह एकता और पूर्णता जैसे विचारों पर भी आधारित है। पर्यावरणीय संरक्षण के सम्बन्ध में गांधीवादी दर्शन की प्रासंगिकता को मुख्यतया सत्य और अहिंसा के सिद्धांत के आधार पर विश्लेषित किया जा सकता है। जैसा की उन्होंने कहा है कि सत्य के अनुयायी कभी किसी को हानि पहुँचाने वाले कार्य नहीं करते हैं। यहाँ "किसी" शब्द काफी व्यापक है। जिसके अंतर्गत न केवल मानव जाति बल्कि प्रकृति के जीव के साथ ही साथ स्वंम प्रकृति भी समाहित है। यदि इस विचार का विश्लेषण पर्यावरणीय परिदृश्य में की जाए तो यह स्पष्ट होता है कि सत्य के अनुसरण करने वाले कभी भी प्रकृति के विरूद्ध किसी कार्य को सम्पादित नहीं करेंगे। अतः यहाँ सत्य अपने आप में पर्यावर्णीय संरक्षण की धारणा को समाहित किए हुए है।

## साधनों की पवित्रता एवं पर्यावरण चेतना

गाँधी ने साधनों की पवित्रता को अत्यावश्क माना है। उन्होंने कहा कि पश्चिम में लोगों की आम राय है कि मनुष्य का एकमात्र कर्त्तव्य अधिकांश मानव जाति की सुख वृद्धि करना है और सुख का अर्थ केवल शारीरिक सुख और आर्थिक उन्नति माना जाता है। यदि इस सुख की प्राप्ति में नैतिकता के कानून भंग किये जाते है तो उसकी बहुत परवाह नहीं की जाती। इस विचारधारा के परिणाम यूरोप के चेहरे पर स्पष्ट अंकित है। शारीरिक और आर्थिक लाभ की यह एकांगी खोज जो नैतिकता का कुछ भी ख्याल रखे बिना की जाती है, ईश्वर कानून के विरुद्ध है जैसा पश्चिम के कुछ बुद्धिमान मनुष्यों ने बता दिया है जॉन रस्किन ने अपनी पुस्तक 'अनटू दिस लास्ट' नामक पुस्तक में बताया कि मनुष्य तभी सुखी हो सकते है जब वे नैतिक कानून का पालन करें। नैतिक कानून के पालन बिना मानव सुखी नहीं रह सकता और मानव सुखी नहीं रहेगा तो समाज में दुःखों व कष्टों का जन्म होगा और इस कष्ट का प्रभाव मात्र मानव जाति पर ही नहीं बल्कि समस्त सृष्टि पर पड़ेगा जिनमें जंगल, जमीन, पशु, पक्षी आदि समाहित है। परिणामतः पर्यावरण भी इसमें सम्मिलित है। आज जो पर्यावरण असन्तुलन की समस्या उत्पन्न हुई है उसमें मानव की अनैतिक गतिविधियों को एक प्रमुख कारक माना जा सकता है। गाँधी इस बात से पूर्णत सहमत थे। इस हेतु ही गाँधी ने साधन एवं साध्य दोनों की सम्यता के महत्त्व पर बल दिया। गाँधी के साधन-साध्य विचार का बीज तत्त्व गीता का निष्काम कर्म है। आज मनुष्य का नैतिक पतन हो गया है, नैतिक पतन का प्रभाव न केवल मानव के चरित्र व समाज पर ही पड़ता है बल्कि इसका प्रभाव आज पर्यावरण असन्तुलन पर भी देखा जा सकता है। जैसे आज हरे-भरे पेड़ पौधों के जंगलों को काटना और भौतिक सुख प्राप्ति की लालसा मनुष्य को अनैतिकता की ओर ही ले जाती है। पवित्र साध्य की प्राप्ति के लिए साधनों भी पवित्र होना चाहिए तभी नैतिकता अपनी परीक्षा में खरी उतर सकती है। आज मानव इतना स्वार्थी और लालची हो गया कि उसे अपने अलावा किसी अन्य के बारे में सोचने का वक्त नहीं है इसे उसका नैतिक पतन ही माना जाएगा। नैतिक पतन के कारण ही मानवता का पतन हुआ है। इसकी परिणति में पर्यावरण का भी हास हुआ। [7]

## अहिंसा के चिन्तन में पर्यावरण चेतना

महात्मा गाँधी द्वारा प्रतिपादित राज्य के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की अवधारणा आधुनिक युग में प्रासंगिक है। गाँधी ने शस्त्रों की होड़ को समाप्त करने तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति को अपनाने पर बल दिया। उन्होंने अपने देहावसान के कुछ दिन पहले कहा था आधुनिक सभ्यता ऐसी ही रही तो एक दिन यह अपना विनाश स्वयं करेगी। आज गाँधी का यह कथन सत्य सिद्ध हो रहा है। शस्त्रों की होड़ से प्रकृति का विनाश होता है जिसके फलस्वरूप पर्यावरण को खतरा उत्पन्न होता है। फिलीप नोबल बेकर ने अपनी पुस्तक 'दी आर्मस रेस' में लिखा कि आज कोई राष्ट्र शस्त्रों द्वारा अपनी सुरक्षा नहीं कर सकता। आणविक युद्ध में न किसी की जीत होगी और न ही किसी की हार, अपितु यह सम्पूर्ण प्रकृति का विनाश कर देगा। आज गांधी द्वारा बताये गए अहिंसा मार्ग पर चलकर ही विश्व शांति स्थापित हो सकती है। अतः विश्व शांति के लिए निशस्त्रीकरण के प्रयास चल रहे हैं। जिनके विकल्प के रूप में अहिंसा को व्यवहार में लाकर समाधान

सम्भव है। यद्यपि इससे शुरुआत में कठिनाई हो सकती है। परंतु भावी परिणामों पर संदेह नहीं किया जा सकता। इससे न केवल शांति कायम होगी बल्कि पर्यावरण में भी सुधार होगा।[8] सत्य का गहन अर्थ प्रत्येक के प्रति ईमानदार (चाहे सजीव हो या निर्जीव) तथा निष्ठावान होना है। हमें नैतिक दृष्टि से प्रकृति के प्रति सत्यनिष्ठ होने की आवश्यकता है। हमारे कर्म हमारी सोच के अनुकूल एवं इसके संपूरक होने चाहिए। अर्थात् हमें अपने कर्मों में पर्यावरण के प्रति अहिंसा की प्रवृत्ति अपनानी चाहिए। युगों से, हम इस पर्यावरण के साथ हिंसक व्यवहार करते आ रहे हैं। गाँधी जी ने अहिंसा को हिंसा न करने के मायनों से भी अधिक विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया। मूलतः 'अहिंसा' किसी को चोट पहुंचाने या मारने की इच्छा न होना है। अहिंसा व्यक्तिशः ऐसी आदत या प्रैक्टिस है, जिसमें स्वयं को तथा दूसरों को किसी भी हालत में नुकसान नहीं पहुँचाया जाता। यह आदत इस विश्वास से उत्पन्न होती है कि किसी परिणाम को हासिल करने के लिए लोगों, मनुष्यों या पर्यावरण को चोट या क्षति पहुंचाना जरूरी नहीं है। यह नैतिक, धार्मिक या आध्यात्मिक सिद्धांतों पर आधारित हिंसा की प्रवृत्ति न होने की विचारधारा है। इस शब्द तथा इससे जुड़े अन्य शब्दों को जीन शार्प के शब्द कोश में स्पष्ट किया गया है।[9] इसलिए यहां यह सवाल उठता हैः हम पर्यावरण के प्रति हिंसक क्यों हैं? क्या पर्यावरण हमारे प्रति हिंसक है? नहीं, मैं ऐसा कदापि नहीं सोच सकता। लेकिन, नैतिक दृष्टिकोण के अभाव के कारण ही प्रकृति के प्रति मानव जाति के निर्दयतापूर्वक व्यवहार को बढ़ावा मिलता है। हम अपने ही अस्तित्व में सहायक पर्यावरण के प्रति इतने मिथ्याचारी एवं हिंसक क्यों हैं? अनेक सदियों से मनुष्य की मनोवृत्ति रही है कि वह बिना सोचे समझे कुछ भी कर लेता है। परिणामों से बचता हुआ भागता है। मेरा यह अनुमान है कि अब समय आ गया है कि हम अपनी ऐसी आदतें बदलें तथा पर्यावरण के प्रति अपने नैतिक कर्तव्यों पर ध्यान दें। इसलिए, हम गाँधी जी के सत्य और अहिंसा के नैतिक सिद्धांत व्यवहार में लाएं तथा पृथ्वी को बेहतर वास स्थल बनाएं।

"मनुष्य में नव जीवन की रचना करने की शक्ति नहीं है, अतः उसे किसी जीवित प्राणी को मारने का कोई अधिकार नहीं है"।

महात्मा गाँधी यह भी मानते थे कि अहिंसा और दया (करुणा) का भाव केवल मनुष्यों के प्रति ही नहीं रखना है, बल्कि निर्जीव पदार्थों के प्रति भी समान व्यवहार करना है। निर्जीव पदार्थों के अति उपयोग का लालच एवं जैवमंडल के बलबूते पर अनुचित लाभ कमाने की इच्छा भी हिंसा ही है। क्योंकि इसके कारण अन्य लोग ऐसे पदार्थों के उपयोग से वंचित रह जाते हैं। गाँधीजी का यह स्पष्ट नजरिया था कि पारितंत्र के सजीव एवं निर्जीव घटकों के बीच परस्पर निर्भरता पाई जाती है। ये दोनों परस्पर आश्रित हैं। वे मनुष्यों को समस्त प्राणियों के न्यासी (ट्रस्टी) मानते थे। जब वे यह घोषित करते थे तो आश्चर्य नहीं होता, "यह कहना हठधर्मिता होगी कि मनुष्य मालिक (Lords) है तथा निम्नतर प्राणी गुलाम हैं, जबकि इसके विपरीत वे मानव पशु जगत के ट्रस्टी' हैं।" अतः यदि हम स्वयं को पशु जगत के ही नहीं बल्कि समूची प्रकृति के ट्रस्टी मानते हैं, तब हम नैतिक दृष्टि से प्रकृति का किसी भी कीमत पर नाश नहीं करेंगे। हमें प्रकृति के ट्रस्टी रूप में कार्य करना चाहिए तथा हम कर्म से पर्यावरण के संरक्षण, परिरक्षण एवं देखभाल के लिए कृत संकल्प होंगे। अहिंसा से तात्पर्य किसी जीव के विरूद्ध हिंसा का प्रयोग नहीं करना है। अहिंसा सम्बन्धी विचार अद्वैतवाद से जुड़ा है। जिसके अंतर्गत 'स्व 'और 'पर' पृथक नहीं हैं। अद्वैत वाद की संकल्पना से तात्पर्य सभी प्राणियों के बीच एकरूपता और सहयोग से है। जिसके अंतर्गत 'स्व' और 'पर' में कोई अंतर नहीं किया जाता है। यदि इस सन्दर्भ में हिंसा का उल्लेख किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि दूसरे के विरूद्ध हिंसा स्वयं के विरूद्ध हिंसा होगी। अतः इस तर्क के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रकृति के विरूद्ध हिंसा भी स्व के विरूद्ध हिंसा है। इसके साथ ही गांधीवादी दर्शन की व्याख्या करते हुए जीन शार्प ने अहिंसा की संकल्पना को परिभाषित की है। जिसमें उन्होंने कहा है कि अहिंसा न केवल एक व्यक्तिगत मूल्य है या इसे व्यक्तिगत आधार पर अपनाना चाहिए बल्कि सामाजिक आधार पर एक "जीवनशैली" के रूप में अपनाना चाहिए। यदि अहिंसा को एक जीवनशैली के रूप में अपनाया जाता है तो हमारी अहिंसात्मक जीवनशैली पर्यावरणीय संवर्धन में काफी सहायक होगा क्योंकि हम अपने जीवनयापन के लिए प्रकृति पर निर्भर है। इसके साथ ही अहिंसात्मक जीवनशैली से प्रकृति के दोहन के दर को कम कर सकते है। अतः सत्य और अहिंसा सम्बन्धी अवधारणा के द्वारा पर्यावरण का संरक्षण किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में प्रकृति के साथ हमारा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। हमारे जीवन का प्रत्येक पहलू प्रकृति से जुड़ा है। सत्य और अहिंसा को वैचारिक रूप में अपनाने के बाद ही हम अपने सभी कार्यों को सत्य और अहिंसा पर आधारित कर सकते हैं। इस दृष्टिकोण की पर्यावरणीय परिदृश्य में विवेचना करें तो यह स्पष्ट होता है कि अहिंसा प्रकृति के संरक्षण में मददगार होगी। अहिंसा न केवल 'जियो और

जीने दो' से सम्बंधित है बल्कि यह 'जियो और दूसरों को जीने में मदद' करने से जुड़ी है। यहाँ "दूसरा" शब्द न केवल मानव जाति बल्कि प्रकृति को भी समाहित किए हुए है। अतः गांधीजी की अहिंसा सम्बंधित धारणा "जीवन" के प्रति सकारात्मक एवम गतिमान दृष्टिकोण है। यहाँ यह कहा जा सकता है कि उन्होने एक सरल जीवन का समर्थन किया है। जिसका प्रकृति से सही रूप में ताल मेल हो सके। इसी सन्दर्भ में उन्होने उपभोक्तावाद सम्बंधित विचारों की आलोचना की है।

## अस्तेय के चिन्तन में पर्यावरण चेतना

अस्तेय किसी वस्तु के प्रति लालच का भाव न रखना, किसी विशेष वस्तु की प्राप्ति की इच्छा न करना, तथा अपनी आवश्यकताओं को न्यूनतम कर लेना जिससे पर्यावरण स्वतः ही संतुलित हो सकता है। विश्व में आजकल जिस प्रकार की चोरी का प्रचलन चल रहा है वह वैचारिक चोरी ही है। इसके परिणामस्वरूप आज विश्व को पर्यावरण असन्तुलन का सामना करना पड़ रहा हैं। इसका कारण अनावश्यक भौतिक वस्तुओं की चाहत है। गाँधी के अनुसार यदि हम संसार की सब वस्तुओं को परमेश्वर की मालिकी समझे और प्राणी मात्र को परमात्मा के अधीन रहने वाले एक कुटुम्ब माने, तो संसार की समस्त आवश्यक वस्तुओं का उपभोग करने का हमें अधिकार रहता है। इससे अधिक कदापि नहीं है। परन्तु आज इसका निष्ठापूर्वक पालन नहीं किया जा रहा है। जिसके कारण उपभोक्तावादी संस्कृति का जन्म हुआ है। उपभोक्तावादी संस्कृति के इस दुष्परिणाम को गाँधी के अस्तेय व्रत को जीवन में लागू करके समाधान सम्भव प्रतीत होता हैं।[10] अस्तेय व्रत का पालन करने वाला अपनी आवश्यकताओं को उत्तरोत्तर घटायेगा। लगभग हम सभी अपनी आवश्यकताओं को, जितनी वे होनी चाहिए, उससे अधिक बढ़कर रखते है। इस दुनिया की अधिकांश कंगालियत इसी कारण पैदा हुई है। माल के अधिक उत्पादन की आज की पद्धति में हम प्राकृतिक साधन-सम्पत्ति का आवश्यकता से अधिक नाश करते है और कच्चे माल को नाहक बिगाड़ते है। यह अस्तेय का सामुदायिक अंग है। वर्तमान पीढ़ी इस प्रकार अपने लोभ के कारण भावी पीढ़ियों के मुंह का कौर छीन लेती है। अतः माल के उत्पादन में आज जिस प्रकार साधनों का अंधाधुंध दोहन किया जा रहा है। इसमें संयम बरतने की बात गाँधी ने वर्षों पूर्व कही थी। उनके अनावश्यक प्रयोग से आज संसार की मानवता पर प्रश्नचिह्न लग गया है आज जो कोयला, पानी, हवा व प्रकाश का जिस प्रकार भौतिक सुख प्नाप्ति में प्रयोग किया जा रहा है। गाँधी इसके खिलाफ थे। और आज विज्ञान के युग में जहाँ श्रम की क्षमता घटी और उसका स्थान मशीनों ने ले लिया यह भी अप्रत्यक्ष रूप से चोरी ही है।

## ट्रस्टीशिप के चिन्तन में पर्यावरण चेतना व संदर्भित सुझाव

ट्रस्टीशिप की अवधारणा प्रकृति संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है। आज के सन्दर्भ में यह तर्क संगत प्रतीत होता है। प्रकृति में संतुलन को बनाये रखने के लिए गांधीजी के ट्रस्टीशिप जैसे विचार प्रासंगिक हैं। ट्रस्टीशिप को दो सन्दभों में अपनाना चाहिए। पहला उत्पादन और दूसरा उपभोग के सन्दर्भ में। वर्तमान में, उत्पादन उपभोक्तावाद जैसे विचार से निर्देशित हो रहे हैं। जिसके कारण वस्तुओं का अंधाधुंध उत्पादन किया जाता है। जिससे प्रकृति का दोहन होता है जो जैव विविधता के असंतुलन का प्रमुख कारण है। गांधीजी मशीनों और टेक्नोलॉजी के "अंधाधुंध और बेमतलब" प्रयोग के विरोधी थे। उनका कहना है कि मशीनों का "युक्ति संगत उपयोग" होना चाहिए। जिसे ईको-फ्रेंडली टेक्नोलॉजी भी कहा जा सकता है। उन्होने कहा है कि सभ्यता का सही अर्थ स्वार्थ पर आधारित आवश्यकताओं को बढ़ाते जाने में नहीं बल्कि उन्हे सोच विचार कर स्वेच्छा से घटाने में है"। अगर हम उत्पादन के प्रभावों का परिक्षण करें तो यह कहीं-न-कहीं प्रकृति को भी प्रभावित करता है। उदाहरणस्वरूप यदि उत्पादन हेतु एक वृक्ष को काटा जाता है तो इसे सिर्फ उत्पादन के साधन मात्र ही नहीं समझना चाहिए बल्कि यह प्राकृतिक जीवों का आवास भी है और पूर्ण परिस्थितिकीय तंत्र का अभिन्न हिस्सा भी है। अतः यदि हम इन पक्षों को नजरअंदाज किये बिना उत्पादन के क्रम में वृक्षों की अंधाधुंध कटाई करते हैं तो इसका असर पूरी पारिस्थितिकीय तंत्र पर पड़ेगा। हमें उत्पादन के सन्दर्भ में ट्रस्टीशिप के सिद्धांतों को अपनाना चाहिए। वहीं ट्रस्टीशिप का दूसरा पहलू उपभोग है। उपभोग को दो स्तरों में विभाजित किया गया है, व्यक्तिगत और सामाजिक। जैसा कि गाँधीजी ने अपनी पुस्तक "हिंदी स्वराज" में आधुनिक मशीन की आलोचना की है और इसके साथ ही साथ वो उपभोक्तावाद के विचार की भी आलोचना की है। उनका कहना है कि अपनी जरूरत के अनुसार ही उपभोग करना चाहिए क्योंकि उपभोक्तावाद के कारण हीं वस्तुओं का अंधाधुंध उत्पादन होता है जिसके परिणामस्वरूप पारिस्थितिकीय असंतुलन में वृद्धि होती है। यदि हम उपभोक्तावाद को अपनाते हैं, परिणामतः हम अंधाधुंध उत्पादन प्रक्रिया को बढ़ावा देंगे। जिससे प्राकृतिक संसाधन के दोहन

के दर में तीव्र वृद्धि होगी। अंततः यह प्रक्रिया परिस्थितिकीय तंत्र को असन्तुलित कर देगी। अतः जीवन को बेहतर बनाने के लिए सीमित साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

## संदर्भ सूची


1- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-64

2- गाँधी, ग्राम-स्वराज, संग्राहक-हरिप्रसाद व्यास, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, 2013, पृष्ठ- 40,41

3- शेखर सुधांशु, गाँधी विमर्श, दर्शना पब्लिकेशन, भागलपुर, बिहार, 2015, पृष्ठ-117,118

4- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-12

5- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-55

6- शेखर सुधाशुं, गाँधी विमर्श, दर्शना पब्लिकेशन भागलपुर, बिहार, 2015, पृष्ठ-122

7- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-27

8- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-47

9- शार्प का शब्दकोश डिक्शनरी ऑफ पावर एंड स्ट्रगलः लैंग्वेज ऑफ सिविल रिसिस्टेंट्स इन कान्फ्लिक्ट्स; ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, न्यूयार्क, 2012

10- मीना, राकेश कुमार, "पर्यावरण संरक्षण की वैकल्पिक तकनीक", आर. बी. एस. पब्लिशर्स, 2008, पृष्ठ-48